न्यायालयों में सुधार

चर्चा में क्यों?

हाल ही में पठानकोट की एक विशेष न्यायालय ने कठुआ मामले पर अपना फैसला सुनाया। यह निर्णय अपराध के अठारह महीने बाद दिया गया। यह अपेक्षाकृत एक त्वरित निर्णय था क्योंकि भारत में ज़्यादातर मामलों में पुलिस और न्यायपालिका दोनों स्तरों पर देरी के कारण उन्हें निस्तारित करने में अधिक समय लगता है।

प्रमुख बिंदु

- भारत की अधीनस्थ अदालतों में ऐसे 31 मिलियन मामलों में से एक तिहाई से अधिक मामले तीन वर्षों से लंबित हैं जिनमें अभी तक फर्स्ट-पोर्ट-ऑफ-कॉल (first port-of-call) भी नहीं हुआ है। जबकि उच्च न्यायालयों में लंबित मामलों के संदर्भ में यह आँकड़ा और भी अधिक है, देश भर के सभी उच्च न्यायालयों में 8 मिलियन मामलों में से आधे मामले तीन साल से अधिक समय से लंबित हैं।
- वित्त मंत्रालय के वर्ष 2017 के आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार, आर्थिक और वाणिज्यिक मामलों का धीमी गति से निस्तारण देश में निवेश चक्र को पुनर्जीवित करने वाले सबसे बड़े अवरोधों में से एक है। हालाँकि सरकार द्वारा व्यापार और वाणिज्य को आसान बनाने के लिये व्यापक रूप से प्रयास किये जा रहे हैं तथापि लंबित मामलों के चलते निवेश पर इसका प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। जब न्यायालयों में दर्ज मामले वर्षों तक लंबित रहते हैं, तो इसका समाज और अर्थव्यवस्था दोनों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
- वर्तमान सरकार का अगला कदम व्यापार करने में आसानी से संबंधित है जिसके अंतर्गत अपीलीय और न्यायिक क्षेत्र में लंबित मामलों का शीघ्र निपटान, सुनवाई में होने वाली देरी आदि को निस्तारित करने पर बल देना है।
- इससे विवादों के समाधान और अनुबंध प्रवर्तन (Contract Enforcement) में बाधा उत्पन्न हो रही है, निवेश के हतोत्साहित (Discouraging Investment) होने से परियोजनाओं का कार्य बाधित होता है, साथ ही कर संग्रह में भी बाधा उत्पन्न होती है, करदाताओं पर तनाव बढ़ता है और कानूनी लागत में इज़ाफा होता है।
- इसके लिये सरकार एवं न्यायपालिका में समन्वय स्थापित करने की आवश्यकता है जिससे कानूनी विलंब (law Delay's) के कारणों की पहचान करते हुए आर्थिक गतिविधियों को बढ़ावा दिया जा सकें।
- समाचार पत्र द मिंट (Mint) के सर्वेक्षण के अनुसार, यह एक देशव्यापी समस्या है, लेकिन देश के कुछ राज्य की स्थिति तुलनात्मक रूप से अधिक खराब हैं, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा और बिहार जैसे राज्यों के अधीनस्थ न्यायालयों में लगभग 50% से अधिक मामले बीते 3 वर्षों से लंबित पड़े हुए हैं। कई बार ऐसा भी देखा गया है कि निचली अदालतों में लंबित मामले का सीधा प्रभाव ऊपरी अदालतों पर पड़ता है एवं वहाँ भी मामले लंबित होने लगते हैं।
- कोलकाता तथा उड़ीसा उच्च न्यायालय दोनों में संयुक्त रूप से 70% मामले तीन वर्षों से लंबित हैं। इसके विपरीत कुछ उच्च न्यायालय ऐसे भी हैं, जहाँ मामलों का निस्तारण अधिक तेज़ी से होता हैं। उदाहरण के लिये, पंजाब और हरियाणा में 6% से भी कम लंबित मामले तीन साल से अधिक समय से लंबित हैं।
- कुल मिलाकर, देश के पूर्वी राज्यों में पश्चिमी राज्यों की तुलना में बहुत अधिक मुकदमें लंबित पड़े हुए हैं।
- भारतीय न्यायिक प्रणाली के अंतर्गत लंबित मामलों के निपटारे की क्षमता, उसके पास उपलब्ध संसाधनों एवं लंबित मामलों की मात्रा और प्रक्रिया पर निर्भर करती है। वर्ष 2006 में भारत की निचली अदालतों में 15 मिलियन मामले लंबित थे और वर्ष 2017 में यह आँकड़ा बढ़कर 20 मिलियन हो गया।
- विधिक शोधकर्त्ताओं के अनुसार, न्यायालयों में दाखिल होने वाले मामलों में वृद्धि देश के विकास का द्योतक होती है: यह न केवल एक समृद्ध समाज में अधिकारों के प्रति अधिक जागरूकता को प्रकट करती है बल्कि लोगों को अपने अधिकारों की सुरक्षा हेतु न्यायालयों की ओर रुख करने के लिये भी प्रोत्साहित करती है।
- कुछ विशेषज्ञों का मानना है कि भारत के उच्च न्यायालय भी रिट याचिकाओं (यह तब दायर की जाती है जब ऐसा प्रतीत हो कि मौलिक अधिकारों का हनन हो रहा है) को स्वीकार करने में अत्यधिक उदार रवैया अपनाने लगे है इस व्यवहार के चलते 26% रिट याचिकाएँ ऐसी हैं जो पिछले पाँच सालों से अधिक समय से लंबित पड़ी हैं।
- इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि न्यायालयों पर मुकदमों का बोझ तो लगातार बढ़ा है, लेकिन उसके अनुरूप न्यायालय के संसाधनों में कोई वृद्धि नहीं हुई हैं। जिसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि बीते 18 वर्षों में पहली बार भारत के सर्वोच्च न्यायालय में सभी पदों पर नियुक्ति (31 न्यायाधीशों के साथ) पूर्ण हुई है। अन्य न्यायालयों में कालानुक्रमिक रूप से न्यायाधीशों की कमी बनी हुई हैं।
- भारत के उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों के पदों की स्वीकृत संख्या 1,049 है लेकिन वर्तमान में कार्यरत न्यायाधीशों की संख्या केवल 680 हैं अर्थात् लगभग 37% पद रिक्त है। इसी तरह निचली अदालतों में भी न्यायाधीशों के 25% पद रिक्त पड़े हैं।

आगे की राह

- इसका स्पष्ट समाधान यह है कि अदालतों की स्वीकृत पदों की संख्या में वृद्धि करते हुए और अधिक न्यायाधीशों को नियुक्त करना होगा। वर्ष 2016 में तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश टी.एस. ठाकुर ने अनुमान व्यक्त किया था कि भारत में न्यायपालिकाओं में लंबित बैकलॉग मामलों को निस्तारित करने के लिये 70,000 अधिक न्यायाधीशों की आवश्यकता है।
- पिछले कई वर्षों में विभिन्न आयोगों ने इस मुद्दे से व्यापक रूप से निपटने के लिये कई सिफारिशें पेश की हैं। उदाहरण के लिये, वर्ष 2005 में 11वें वित्त आयोग ने न्यायालयों में लंबित मामलों का तीव्रता से निस्तारण करने के लिये फास्ट-ट्रैक अदालतों के गठन की सिफारिश की थी।
- हाल ही में वर्ष 2014 में 245वें विधि आयोग ने और अधिक छोटे मामलों (जैसे- यातायात अपराधों आदि) की सुनवाई के संदर्भ में हाल के कानून विशेषज्ञों द्वारा विशेष अदालतों की स्थापना किये जाने तथा निचली अदालतों में न्यायाधीशों की सेवानिवृत्ति की आयु बढ़ाने की सिफारिश की।
- वर्ष 2018 में कानून मंत्री रविशंकर प्रसाद ने केंद्रीय न्यायिक सेवा आयोग की तर्ज पर निचली अदालतों के लिये एक केंद्रीकृत भर्ती प्रणाली लागू करने का सुझाव दिया था। इनमें से कुछ सिफारिशों, जैसे- फास्ट-ट्रैक कोर्ट (कठुआ मामले में प्रयुक्त) को लागू भी किया गया, लेकिन अधिकतर सिफारिशों के संबंध में कोई कार्यवाही नहीं की गई।

यह देखते हुए कि न्यायालयों में लंबित मामले भारतीय अर्थव्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं, इस संदर्भ में जल्द-से-जल्द आवश्यक सुधार एवं प्रभावी उपाय किये जाने की आवश्यकता है।

स्रोत: लाइव मिंट

PDF Refernece URL: https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/india-next-generation-reforms-must-begin-in-courts